नवंबर १९९६ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

उद्‌बोधन

मन का संवर और सरलता

मेरे प्यारे साधक साधिकाओ!

आओ, विपश्यना द्वारा मन का संवर करना सीखें! बड़ा मंगलदायी है मन का संवर!

संवर होगा तो ही मन सँवरेगा, सुधरेगा, स्वच्छ होगा। तो ही मानसिक दुराचरण से बच सकेंगे। तो ही मानसिक सदाचरण में लग सकेंगे। तो ही वाचिक और कायिक दुराचरण से बच सकेंगे। तो ही वाचिक और कायिक सदाचरण में लग सकेंगे।

मन का संवर नहीं होता तो मन की गहराइयों में समायी हुई संस्कार-ग्रंथियों की निर्जरा नहीं होती, उनका उपशमन नहीं होता, उनका विमोचन नहीं होता, उनसे विमुक्ति नहीं होती। कर्म-संस्कारों का संचित पुंज मन को अपने सहज निर्मल स्वभाव में स्थित नहीं होने देता।

कर्म-संस्कार अज्ञान की ही उपज हैं और अज्ञान भी कर्म-संस्कारोंसे ही घनीभूत होता है। यह घनीभूत अज्ञान ही हमें यथाभूत दर्शन नहीं करने देता। जो अनित्य है उसकी अनित्यता का दर्शन नहीं करने देता, उसके प्रति नित्यता का भ्रम पैदा करते रहता है। बौद्धिक स्तर पर, सैद्धांतिक स्तर पर हजार अनित्यता को स्वीकारते रहें, पर यथार्थ के स्तर पर तो सदा नित्य भाव में ही आबद्ध रहते हैं।

जीवन में जब कभी मनचाही स्थिति पैदा होती है, धन-दौलत, पद-प्रतिष्ठा, सत्ता-शक्ति उपलब्ध होती है तो उसे नित्य मान कर ही ऐसे अंधेपन का बर्ताव करने लगते हैं जो कि स्वपीड़न और परपीड़न का कारण बनता है। गर्व, घमंड की स्टीम से भरे अंधे रोलर की तरह सब की सुख-शांति कुचलते चलते हैं। जरा भी होश नहीं रहता कि यह स्थिति सदा रहने वाली नहीं है।

और फिर प्रकृति के नियमों के अनुसार वह मनचाही स्थिति देर-सबेर नष्ट होती है और उसके विनष्ट होने पर अनचाही स्थिति उत्पन्न होती है तो फिर अज्ञान का अंधापन आ घेरता है। इसी अंधेपन के कारण ही उस दुखद स्थिति को भी नित्य ही मान बैठते हैं और उदासी, निराशा, कुंठा, हीन-भावना, चिडचिडाहट, उद्विग्नता, दुश्चिंता आदि में आकंठ डूब जाते हैं। जरा भी होश नहीं रहता कि यह स्थिति भी तो सदा रहने वाली नहीं है।

स्थिति चाहे सुखद आये या दुखद, जहां अंधेपन में डूब कर उसे नित्य मानने लगते हैं, वहां मन का संतुलन खो बैठते हैं, मन की निर्मलता खो बैठते हैं, मन की सुख-शांति खो बैठते हैं। दोनों ही अवस्था में त्रिविध दुराचरण करते हैं और अपने दुखों का स्वयं संवर्धन करते हैं।

नैसर्गिक स्वच्छ मन स्वभाव से सरल ही होता है। नैसर्गिक सरलता खो बैठते हैं तो मन की स्वच्छता खो बैठते हैं। सरलता खो बैठने के तीन प्रमुख कारण हैं जिनसे कि हमें सावधान रह कर बचना है। कौन से तीन? तण्हा, मान और दिट्ठि याने तृष्णा, अहमन्यता और दार्शनिक दृष्टियां। इन तीनों में से किसी एक के प्रति भी जब-जब जितनी-जितनी आसक्ति होती है तब-तब उतनी-उतनी सरलता खो ही बैठते हैं, उतनी-उतनी स्वच्छता गँवा ही देते हैं। उतने-उतने मलीन हो ही जाते हैं, उतने-उतने सुख-शांति-विहीन हो ही जाते हैं, उतने-उतने दुखी हो ही जाते हैं।

जैसे-जैसे किसी भी वस्तु, व्यक्ति अथवा स्थिति के प्रति तृष्णा जागती है और आसक्ति बढ़ती है वैसे-वैसे उसे प्राप्त करने के लिए अथवा प्राप्त हुई हो तो अधिकार में रखने के लिए हम हर बुरे से बुरा तरीका अपनाने पर उतारू हो जाते हैं। चोरी, डकैती, झूठ-फरेब, छल-छद्म, प्रपंच-प्रबंधन, धोखाधड़ी आदि-आदि सब कुछ अपनाते हैं। अपने पागलपन में मन की सारी सरलता खो बैठते हैं। साध्य हासिल करने की आतुरता में साधनों की पवित्रता खो बैठते हैं। इतने प्रमत्त हो उठते हैं कि तृष्णा पूर्ति में जो भी बाधक लगता है, उसे दूर करने के लिए, नष्ट करने के लिए असीम क्रोध, रोष, द्वेष, द्रोह, दौर्मनस्य और दुर्भावनाओं का प्रजनन करने लगते हैं और परिणाम स्वरूप अपनी ही सुख-शांति भंग करते हैं, अपनी ही सरलता नष्ट करते हैं।

इसी प्रकार जब "मैं-मेरे" के प्रति आसक्ति तेज होती है तो उस मिथ्या आरोपित "मैं-मेरे" की मिथ्या सुरक्षा के लिए, मिथ्या हित-सुख के लिए, जिन्हें "मैं-मेरा" नहीं मानते उनकी बड़ी से बड़ी हानि करने पर तुल जाते हैं। ऐसा करते हुए वस्तुतः अपनी ही अधिक हानि करते हैं। सबसे पहले अपने मन की सरलता की हत्या करते हैं। अपनी आंतरिक स्वच्छता खो बैठते हैं। अपनी सुख-शांति गँवा बैठते हैं। औरों को ठगने के उपक्रम में स्वयं ही ठगे जाते हैं।

इसी प्रकार जब हमें अपनी दार्शनिक दृष्टि अथवा सांप्रदायिक मान्यता के प्रति आसक्ति हो जाती है तो भी हम मन की संकीर्णता के शिकार हो जाते हैं और अपनी सहज सरलता खो बैठते हैं। मन जब पानी की तरह सहज-सरल-तरल होता है तो अपने आपको सच्चाई के पात्र के अनुकूल ढाल भी लेता है और अपनी सरलता भी नहीं गँवाता। रास्ते में अवरोध आता है तो कल-कल्लकरता हुआ उसके बगल से निकल जाता है। कोई अवरोध उसे काटता भी है, दो टुकड़े भी करता है, तो अवरोध के आगे बढ़ कर फिर जुड़ जाता है, वैसे का वैसा हो जाता है। परंतु मन जब पत्थर की तरह कठोर हो जाता है तो चट्टानों से टकरा कर चिनगारियां ही पैदा करता है, चूर-चूर ही होता है। जहां हमारी दृष्टि दार्शनिक विश्वासों के प्रति, अंध मान्यताओं के प्रति, कर्मकांडों के प्रति, बाह्य आडंबरों के प्रति, आसक्त होकर रूढ़ हो जाती है वहां पथरा जाती है। पथरायी हुई दृष्टि निर्जीव हो जाती है। पथरायी हुई दृष्टि हमें अंधा बनाती है, हमारे कल्याण का रास्ता बंद करती है। सांप्रदायिकता की दासता में जकड़े जाने के कारण हम सत्य को अपने चश्मे से ही देखना चाहते हैं। उसे तोड़-मरोड़ कर अपनी

मान्यता के अनुकूल बनाना चाहते हैं। उस पर अपना रंग-रोगन लगाना चाहते हैं। उसकी सहज स्वाभाविकता नष्ट करते हैं। सत्य का सहज सौंदर्य नष्ट करते हैं और इस दुष्प्रयास में अपने मन की सरलता ही नष्ट करते हैं। उसे कुटिलता से भर लेते हैं।

कुटिलता कठोरता है, सरलता मृदुता है। कुटिलता अभिमानता है, सरलता निरभिमानता है। कुटिलता ग्रंथि-बंधन है, सरलता ग्रंथि-विमोचन है।

ग्रंथि-बंधन सचमुच बड़ा दुखदायी है। सच्चा सुख तो ग्रंथि-विमोचन में ही है, विमुक्ति में ही है। जब-जब सरलता खो कर कुटिलता अपनाते हैं, तब-तब अपना मानसिक संतुलन खो बैठते हैं। भीतर ही भीतर तनाव खिंचाव शुरू हो जाता है। अनजाने में अपने लिए गांठें बांधने लगते हैं। अंतर्मन गांठ-गठीला हो उठता है। उसके साथ-साथ सारा शरीर भी भीतर-ही-भीतर तनाव-खिंचाव से गांठ-गठीला हो उठता है। मूंज की रस्सी की तरह बल खा-खा कर अकड़ जाता है। अकड़ जाता है तो हम बेचैन ही रहते हैं, अशांत ही रहते हैं, व्याकुल ही रहते हैं। हमारी यह आंतरिक व्याकुलता चिडचिडाहट के रूप में, झुँझलाहट के रूप में बाहर प्रकट होती रहती है और इस प्रकार हम अपनी बेचैनी औरों पर भी बरसाते रहते हैं।

सरलता ही मन की विशुद्धि है। कुटिलता मलीनता है। मलीनता अनर्थकारिणी है। विशुद्धता स्वार्थ-साधिनी है। कुटिलता सर्वहित-नाशिनी है। सरलता सर्वहित-कारिणी है। अतः न केवल अपने हित-सुख साधन के लिए बल्कि सब के हित-सुख साधन के लिए सरलता अपनाएं। कुटिलता त्यागें।

जागरूकता का अभ्यास करते हुए मन का संवर करेंगे तो दुख-संवर्धन करनेवाली इस अज्ञानजन्य प्रमत्त अवस्था से शनैः शनैः छुटकारा पाते जायेंगे। सभी क्लेशों के, आस्रवों के, कषायों के, कर्म-कलुषता के बंधनों से मुक्त होते जायेंगे। दुखों से छुटकारा पाते जायेंगे। दुख-बंधन और दुख-निरोध का यह नैसर्गिक नियम सब पर लागू होता है। चाहे कोई अपने आप को बौद्ध कहे या जैन या अन्य कुछ। इस नामकरण के भेद से कुछ अंतर नहीं पड़ता।

मन जब सहज-सरल रहता है तो मृदु-मधुर रहता है, सौम्य-स्वच्छ रहता है, शीतल-शांत रहता है। शरीर भी हल्का-फुल्का रहता है। पुलक-रोमांच से भरा रहता है। परिणामतः हम प्रीति-प्रमोद से, सुख-सौहार्द से भर उठते हैं। हमारी यह आंतरिक प्रीति, यह आंतरिक शांति, मैत्री और करुणा के रूप में बाहर प्रकट होती है और इस प्रकार हम अपनी सुख-शांति औरों को भी बांटते हैं। अपने आस-पास के सारे वायुमंडल को प्रसन्नता से भरे रखते हैं।

अतः साधको! आओ, प्रकृति के इस अटूट नियम को समझते हुए विपश्यना द्वारा मन का संवर करें। सचमुच बड़ा मंगलदायी है मन का संवर। मन का संवर करके उसे सरल बनाएं। आत्महित के लिए, परहित के लिए, सर्वहित के लिए, आओ, कुटिलता त्यागें! आओ, सरलता अपनाएं! कुटिलता में महाअमंगल समाया हुआ है। सरलता में महामंगल समाया हुआ है।

मंगल मित्र,
सत्यनारायण गोयन्का.

(नए साधकों के लाभार्थ 'विपश्यना' के वर्ष ४, अकं ४ व ८ का पुनर्मुद्रण)

पूज्य गुरुजी की धर्मयात्रा

३ से ५ मई तक पूज्य गुरुजी द्वारा कलकत्ता के विभिन्न स्थानों पर सार्वजनिक प्रवचन हुए – जिनमें से मुख्य थे – ४ मई को "चूरू निवासी संघ" की ओर से, ४ व ५ मई को विपश्यी साधकों की ओर से धम्मगंगा के विपश्यना केंद्र पर, और ३ मई को "महाबोधि सोसायटी ऑफ इंडिया" के प्रांगण में। महाबोधि सोसायटी की ओर से श्रद्धेय भिक्षु डॉ. रेवतजी ने पूज्य गुरुजी का सार्वजनिक सम्मान किया और उन्हें **"विपश्यना आगम चक्रवर्ती"** की उपाधि से अलंकृत किया।

५ मई को वे कलकत्ता से म्यंमा(बर्मा) पधारे। वहां उन्होंने 'धम्मरतन विपश्यना केंद्र' का उद्घाटन किया, जो कि मोगोक में है और जो विश्व-प्रसिद्ध मणि(रूबी) की खानों का प्रदेश है। बर्मा में रहते हुए रंगून, मांडले, सगाइर् और मोगोक में उनके अनेक धर्म-प्रवचन हुए। रंगून और मांडले में केवल भिक्षुओं के लिए तीन शिविर लगे, जिनमें लगभग १०० भिक्षु प्रत्येक शिविर में बैठे। इनके संचालन के लिए विपश्यना के मनोनीत आचार्य (सिंहली) भिक्षु रतनपाल को भारत से बुलाया गया था। मांडले के साधकों में प्रवचनों और शिविरों के कारण बहुत धर्म-उत्साह जागा और मांडले के समीप तगुंडाइर् में एक विपश्यना केंद्र स्थापित करने के लिए भूमि ली गयी। वहां निकट भविष्य में निर्माण कार्य आरंभ होगा। गुरुदेव गोयन्काजी ने इस केंद्र का नाम '**धम्म मण्डल** ' रखा।

यांगों के **'धम्म जोति'** केंद्र में बच्चों के शिविर भी लगने लगे हैं। बच्चे इन शिविरों से अत्यंत लाभान्वित भी हैं और प्रसन्न भी। हर रविवार की सामूहिक साधना में पुराने साधकों की संख्या इतनी अधिक होती है कि प्रमुख हॉल के भर जाने पर अनेक साधकों को बाहर बरामदे में बैठना पड़ता है। अतः हर रविवार को आने वाले बच्चों की साधना के लिए अलग स्थान की व्यवस्था की गयी है। जब-जब गुरुदेव यांगों में रहते तो धम्मजोति पर सामूहिक साधना के पश्चात बरमी बालक-बालिकाओं का यह समूह गंधकुटी में उनके साथ भी कुछ देर ध्यान करता और तदनंतर उनके साथ समवेत स्वर में हिंदी भाषा में मंगल मैत्री का पाठ करता जो बहुत श्रुतिमधुर होता और सारे वातावरण को धर्म की तरंगों से आप्लावित कर देता।

उन्होंने थाईलैंड की दो बार यात्रा की। एक बार राजमहल में 'विपश्यना विशोधन विन्यास' द्वारा प्रकाशित **'तिपिटक सेट'** प्रदान करने के लिए गए, जबकि थाईनरेश की अस्वस्थता के कारण उनकी ओर से राजकुमारी महाचक्रि नने यह धर्म उपहार ग्रहण किया। दूसरी बार की यात्रा में थाईलैंड की अनेक संस्थाओं को नागरी तिपिटक भेंट किये गये और गुरुदेव के सार्वजनिक प्रवचन भी हुए, जिसमें बहुत बड़ी संख्या में लोग सम्मिलित हो कर लाभान्वित हुए।

थाईलैंड का **'धम्म कमल'** केंद्र अत्यंत सुचारुरूप से चल रहा है। वहां नियमित शिविर लगते हैं। उत्तरी थाईलैंड में **'धम्म आभा'** नाम से एक अन्य केंद्र-निर्माण की अनुमति वर्ष भर पहले की यात्रा में ही पूज्य गुरुदेव ने दी थी। वहां शीघ्र ही निर्माण कार्य आरंभ होने वाला है। इस बार वहां तीसरे केंद्र के निर्माण की अनुमति दी गयी।

ताइवान में उनका महीने भर का कार्यक्रम अत्यंत व्यस्त रहा। सारे द्वीप के अनेक नगरों में उनके प्रवचन हुए। पिछले वर्ष की अगस्त-सितंबर की यात्रा के दौरान वहां गुरुदेव के जो प्रवचन हुए थे उनसे बड़ा धर्मसंवेग जागा था और तब से लेकर अब तक वहां

लगातार शिविर लगते आ रहे हैं। उन्हीं में से एक शिविर में पूज्य गुरुदेव ने स्वयं आनापान तथा एक में आनापान, विपश्यना और मैत्री का धर्मदान दिया। इन शिविरों में गृहस्थ नर-नारी के अतिरिक्त बहुत बड़ी संख्या में भिक्षु और भिक्षुणियों ने भी भाग लिया।

ताइवान की एक जेल में केवल उन कैदियों के लिए शिविर लगा जो कि ड्रग के व्यसन से त्रस्त हैं। इस शिविर का संचालन भारत से गए हुए श्री नारायण पाटिल ने किया और समापन स्वयं गुरुदेव ने। भारत के बाहर जेल में शिविर लगाने का यह प्रथम प्रयोग है और जो सूचनाएं मिल रही हैं उनके अनुसार वहां इस प्रकार के अन्य शिविरों की बहुत मांग उठी है। गुरुदेव ने वहां के एक बड़े कारागार में वंदियों के लिए धर्म प्रवचन दिया, जिससे उनमें धर्म-साधना सीखने की तीव्र लालसा जागी।

ताइवान के भिक्षुओं और भिक्षुणियों के प्रबल आग्रह के कारण गुरुदेव ने आचार्य भिक्षु रतनपालजी को उनके लिए विशिष्ट शिविर लगाने हेतु नवंबर महीने में ताइवान भेजने का निर्णय किया है। वे उस समय वहां दो महीने तक शिविर लगायेंगे। तदनंतर कैनेडियन वरिष्ठ स. आ. अलेन व रसेल लपेंग ताइवान जायेंगे और शिविरों का कार्यक्रम जारी रखेंगे। वहां की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए हो सकता है भविष्य में दो समानांतर शिविर लगाते रहने पड़ें।

ताइवान द्वीप में बच्चों के शिविर का भी आरंभ हुआ। गुरुदेव ने उसके लिए विशेष कैसेट तैयार की, जिसका चीनी भाषा में अनुवाद भी किया गया। उपाचार्य श्री राधेश्याम गोयन्का ने बच्चों का प्रथम शिविर संचालित किया। इस शिविर में ही जो उत्साह जागा, इसके कारण वहां बच्चों के अनेक शिविर लगाने की मांग उठ खड़ी हुई। परिणामतः बच्चों के शिविर के संयोजक उपाचार्य श्री अडवियप्पाजी को ताइवान बुलाया गया। उन्होंने बच्चों के शिविर के साथ-साथ सामान्य दस दिवसीय शिविर व सतिपट्ठान शिविर भी लगाए। इनके परिणाम स्वरूप वहां से अत्यंत उत्साहवर्धक समाचार मिल रहे हैं। श्री अडवियप्पाजी ने जेल में लगे शिविर के साधकों के साथ भी ध्यान किया और उन्हें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन दिया। बच्चों के शिविर के लिए उन्होंने तीन पुराने साधकों को प्रशिक्षित किया जो कि उनके लौट आने के बाद कनिष्ठ स.आ. के रूप में बच्चों के शिविर लगाते रहेंगे।

पिछले वर्ष भर से आचार्य जॉन और गेल बिआरी तथा वरिष्ठ स. आ. एण्डी और कैरोलिन कटिंघम, व. स. आ. डॉ. ज्यो और कैथी पोलैंड, व. स. आ. एलामाई और स्ट्रोवासर, व. स. आ. कर्क और रेनेट ब्राऊन वहां शिविर लेते रहे हैं, जिनमें गृहस्थ उपासक उपासिकाएं तथा बड़ी संख्या में भिक्षु और भिक्षुणियां सम्मिलित होती रही हैं। ये शिविर विभिन्न बुद्ध-मंदिर तथा विहारों में लगते रहे हैं। वहां की कठिनाइयों को देखते हुए साधकों ने वहां एक विपश्यना केंद्र स्थापित करने का निर्णय किया। इस निमित्त दिखायी गयी अनेक जमीनों में से गुरुदेव ने एक अधिक उपयुक्त जमीन का चयन किया, जिसकी खरीद की बात चल रही है और विश्वास है वहां शीघ्र ही केंद्र स्थापित हो जायगा। गुरुदेव ने ताइवान के अनेक भिक्षुओं, गृहस्थों एवं संस्थाओं को देवनागरी तिपिटक सेट भेंट किये।

तदनंतर गुरुदेव ने सिंगापुर और मलेशिया की यात्रा की, जहां उनके अनेक प्रवचन हुए। इनके कारण आगामी वर्ष सिंगापुर में पहला शिविर लगाने की योजना बनी।

इंडोनेशिया में पिछले दो वर्षों में अब तक दो शिविर लग चुके हैं। वहां के साधकों की कामना थी कि गुरुदेव इंडोनेशिया भी जायँ, परंतु लंबी यात्रा की थकान के कारण उसे भविष्य की किसी यात्रा के लिए मुल्तवी किया गया। वहां के प्रमुख साधक उनसे मिलने के लिए सिंगापुर आए और भविष्य में इंडोनेशिया में अधिक शिविर लग सकने की योजना पर विचार-विमर्श हुआ। वहां पर स्थाई केंद्र-निर्माण के लिए साधकों का आग्रह देख कर उसकी रूपरेखा पर भी चर्चा हुई। आचार्य भिक्षु रतनपालजी ताइवान के बाद इंडोनेशिया में भी एक शिविर लगाने जायँगे।

इस प्रकार यह लंबी थकाने वाली यात्रा अनेक लोगों के कल्याणार्थ अत्यंत सफल रही। इससे इन देशों में शुद्ध धर्म का प्रकाश फैलेगा और अधिक से अधिक लोग विपश्यना से लाभान्वित होकर अपना मंगल साधेंगे।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नः किसी पर क्रोध आ रहा है?

उत्तरः अभी समझाया न – क्रोध नहीं करें। कठोरता का व्यवहार अवश्य करें क्योंकि वह मृदु व्यवहार से समझ नहीं रहा है, कठोर वाणी से ही समझेगा। ऐसे समय भीतर करुणा हो, समता हो, फिर भले खूब कठोर हों तो कोई हानि नहीं होगी।

प्रश्नः मेरे अंदर पुराने कर्मों के कारण भय, क्रोध का भरपूर संचय है। इससे छुटकारा चाहती हूं। क्या करें?

उत्तरः जब-जब भय जागता है तो जिस बात को लेकर भय जागा, उस बात पर ध्यान नहीं देना। इस समय मेरे मन में भय जागा है – इस सच्चाई को स्वीकार करो और भय के साथ-साथ जो भी संवेदना जागी हो, कहीं भी जागी हो; उस संवेदना को देख रहे हैं और भय जागा है, इस सच्चाई को देख रहे हैं। यों देखते-देखते देखेंगे कि भय कम हुए जा रहा है, कम हुए जा रहा है, छुटकारा हो जायगा। भय को जबरदस्ती दूर करने की कोशिश मत करो। उसको साक्षीभाव से जानो – 'भय है'। भय के आलंबन पर ध्यान करोगे तो भय बढ़ेगा। आलंबन से कोई लेन-देन नहीं। 'यह भय है और यह संवेदना है' – यों देखना आ गया तो अपने आप दूर होता चला जायगा।

प्रश्नः क्या विपश्यना के बाद तंबाखू का व्यसन छूट सकता है?

उत्तरः सारे व्यसन छोड़ने के लिए विपश्यना होती है। कोई आदमी सचमुच विपश्यना भी करे और सिगरेट भी पीये और तंबाखू भी पीये तो समझ लेना चाहिए कि वह आदमी विपश्यना करता-करातानहीं, ढोंग करता है विपश्यना के नाम पर। विपश्यना करे तो व्यसन टिक नहीं सकते। अरे तंबाखू के व्यसन का क्या कहें, शराब का व्यसन निकल जाता है। आजकल जो ड्रग चले हैं, उनका व्यसन निकल जाता है। सारे व्यसनों से छुटकारा पाने का तरीका ही तो है यह।

केंद्र समाचारः 'धम्मकोट' राजकोट का निर्माणकार्य तीव्र गति से चल रहा है। अब तक वहां पर ४८ साधकों के लिए अटैच्ड बाथ सहित आवश्यक निवास, छोटा साधनाकक्ष, भोजनालय व रसोईघर की छत बन चुकी है। इनके खिडकी-दरवाजे व टाइल आदि लगाने का फिनिशिंग-वर्क चल रहा है।

पालि प्रशिक्षणः जनवरी १९९७ से दिल्ली में विपश्यी साधकों के लाभार्थ पालि सिखलाने की व्यवस्था की जा रही है। इसके अंतर्गत माह में दो रविवार नीचे अंकित स्थान पर पालि-प्रशिक्षण के लिए आना होगा। इच्छुक व्यक्ति इस पते पर संपर्क करें: –व्यवस्थापक, वेद संस्थान, सी-२२, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली-११००२७, फोनः ५१०२३१६.